8

मॉरीशसीय आर्य समाज का हिंदी आंदोलन

—डॉ. उदयनारायण गंगू

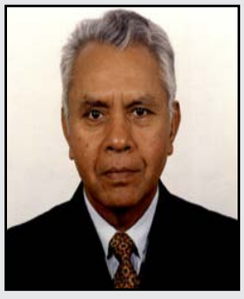

जन्म : 20 अगस्त, 1943
शिक्षा : बी.ए., एम.ए., पीएचडी तथा विद्या वाचस्पति, भारत।
प्रकाशन : हिंदी-अंग्रेज़ी में आपकी 15 रचनाएँ प्रकाशित हैं। साथ ही कई पुस्तकों का संपादन किया है। देश-विदेश की पत्र-पत्रिकाओं में आपके सैकड़ों लेख प्रकाशित हुए हैं।
आपने अनके राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लिया है और आलेख प्रस्तुत किए हैं। हिंदी एवं समाज-सेवा के कारण आपको अनेक बार सम्मानित किया गया है।
40 वर्षों तक सभी स्तरों के विद्यार्थियों—प्राथमिक, माध्यमिक और विश्वविद्यालीय स्तर तक शिक्षण कार्य किया है। आप 'महात्मा गांधी संस्थान' में वरिष्ठ व्याख्याता के पद से 2003 में सेवानिवृत हुए।
वर्तमान में आप आर्य सभा के प्रधान और 'आर्योदय' पत्र के मुख्य संपादक हैं। साथ ही विश्व हिंदी सचिवालय की शासी परिषद के सदस्य हैं।

मॉरीशस में हिंदी के प्रचार-प्रसार का आंदोलन करनेवाली स्वैच्छिक संस्थाओं में आर्य समाज का नाम गर्व से लिया जाता है। यह समाज अपने स्थापना-काल से अब तक हिंदी-शिक्षण के क्षेत्र में कमर कसकर खड़ा है। यहाँ यह बताना समीचीन होगा कि सन् 1834 से 1915 तक भारतीय रोज़ी-रोटी की खोज में शर्तबंद श्रमिक के रूप में मॉरीशस आते रहे। चूँकि अधिकांश जनों की भाषा भोजपुरी थी, अत: यही भाषा भारतीय मूल के लोगों की बोलचाल की भाषा बन गई। कुछेक पढ़े-लिखे श्रमिक रात्रि-काल में फूस के बने 'बैठका' में 'रामचरितमानस' का गान करते थे और सत्संग में भाग लेनेवालों को भोजपुरी में ही दोहे-चौपाइयों को समझाया करते थे। 20वीं सदी के प्रथम दशक में महर्षि दयानंद कृत 'सत्यार्थ प्रकाश' ने इस देश में खड़ी बोली हिंदी का सूत्रपात किया। महर्षि ने हिंदी को 'आर्य भाषा' के नाम से अभिहित किया था। आर्य समाजियों ने इस भाषा को अपना कंठहार बनाया।

मॉरीशस में आर्य समाज की स्थापना

मॉरीशसीय आर्य समाज के हिंदी आंदोलन की चर्चा करने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि इस द्वीप में आर्य समाज की स्थापना कैसे हुई। बात सन् 1902 की है। मॉरीशस में बंगाल से आई हुई एक टुकड़ी भारत लौट रही थी। उस सेना में भोलानाथ तिवारी नाम का एक हवलदार था जिसके पास 'सत्यार्थ प्रकाश' की एक प्रति थी। उसने वह पुस्तक अपने ग्वाले, भिखारीसिंह को दे दी। चूँकि भिखारीसिंह हिंदी पढ़ने में असमर्थ थे, इसलिए उन्होंने खेमलाल लाला नामक व्यक्ति को वह पुस्तक दे दी।

लाला जी 'सत्यार्थ प्रकाश' पढ़ने के प्रयास में लग गए। वे इस ग्रंथ से बड़े ही प्रभावित हुए। उन्होंने इस पुस्तक के बारे में अपने मित्र, गुरुप्रसाद दलजीतलाल को बताया। दलजीतलाल जी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की वह प्रति पढ़ी। इस ग्रंथ-रत्न ने उनके दिल-दिमाग को प्रकाशित कर दिया। फिर यह पुस्तक जगमोहन गोपाल जी ने पढ़ी। उनका भी मन-मस्तिष्क ज्योतित हो उठा। इन त्रिमूर्तियों ने सन् 1903 में मॉरीशस में प्रथम आर्य समाज की स्थापना की। फलत: 'सत्यार्थ प्रकाश' पर सत्संग होने लगा। इसी ग्रंथ के पठन-पाठन से यहाँ खड़ी बोली हिंदी का प्रचार हुआ। खड़ी बोली हिंदी आर्य समाजियों की भाषा बन गई।

सन् 1901 के अक्टूबर मास में युवा बैरिस्टर मोहनदास करमचंद गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटते समय कुछ दिनों के लिए मॉरीशस में रुक गए थे। उन्होंने यहाँ के गोरे पूँजीपतियों को अनपढ़ भारतीय श्रमिकों के प्रति घोर अन्याय करते पाया। मॉरीशस में बसे भारतीयों का कोई रक्षक न था। सन् 1907 में गांधी जी ने बैरिस्टर मणिलाल मगनलाल डॉक्टर को हिंदुओं की रक्षा के लिए मॉरीशस भेजा। बैरिस्टर मणिलाल डॉक्टर ने खेमलाल लाला, गुरुप्रसाद दलजीतलाल, गयासिंह आदि व्यक्तियों के सहयोग से मॉरीशस की

राजधानी, पोर्ट लुई में 8 मई, 1911 में आर्य समाज की स्थापना की जिसका नाम 'आर्य प्रतिनिधि सभा' रखा गया। इस नवस्थापित सभा ने हिंदी के माध्यम से सुप्त हिंदुओं में नवजागरण लाने का आंदोलन प्रारंभ कर दिया।

आर्य समाज की स्थापना से पूर्व हिंदी की स्थिति

सन् 1911 में भारत लौटने पर बैरिस्टर मणिलाल डॉक्टर ने एक प्रकांड विद्वान, डॉ. चिरंजीव भारद्वाज को सपरिवार मॉरीशस भेजा। डॉ. चिरंजीव भारद्वाज के आगमन के लगभग 2 मास पश्चात 28 फरवरी, 1912 को स्वामी मंगलानंद पुरी जी ने भारत से मॉरीशस की धरती पर पदार्पण किया। भारतीय मूल के लोगों ने इस द्वीप में प्रथम बार एक संन्यासी के दर्शन किए। स्वामी जी ने अपने लघु प्रवास-काल के दौरान मॉरीशस का दौरा करके अपना अनुभव निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया, ''यहाँ पूर्वकाल में फ्रेंच का राज्य होने के कारण इस देश की भाषा एक बिगड़ी हुई फ्रेंच ज़ुबान है जिसे 'किरोल' कहा जाता है, सो प्राय: 90 प्रतिशत सैकड़ा यहाँ के जन्मे हुए भारतवासी केवल इसी किरोल भाषा को जानते हैं। यही अब इनकी मातृ भाषा है। इनके लिए हिंदी वैसी ही कठिन और अपरिचित है जैसे हम लोगों के लिए अंग्रेज़ी इत्यादि।

स्वामी जी ने अपने लघु प्रवास-काल के दौरान मॉरीशस का दौरा करके अपना अनुभव निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया, ''यहाँ पूर्वकाल में फ्रेंच का राज्य होने के कारण इस देश की भाषा एक बिगड़ी हुई फ्रेंच ज़ुबान है जिसे 'किरोल' कहा जाता है, सो प्रायः 90 प्रतिशत सैकड़ा यहाँ के जन्मे हुए भारतवासी केवल इसी किरोल भाषा को जानते हैं। यही अब इनकी मातृ भाषा है। इनके लिए हिंदी वैसी ही कठिन और अपरिचित है जैसे हम लोगों के लिए अंग्रेज़ी इत्यादि।

हाँ! क्या इससे बढ़कर शोक का विषय हो सकता है कि आज यह मारीच (मॉरीशस) देश में आनेवाले हिंदू अपनी मातृ भाषा को ही भूल गए। किसी जाति की जातीयता उसकी एक मातृ भाषा होने के द्वारा संसार में विद्यमान रह सकती है। जब वही न रह गई तो मुझे कैसे संतोष हो? जिस हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने का हम प्रयत्न कर रहे हैं उसे उसके केंद्र स्थान काशी, प्रयाग आदि के निवासी यहाँ आकर भूल गए। क्या यह महाशोक की बात नहीं है?'' (भारतीय वाङ्मय में मॉरीशस की संस्कृति, मारीच (मॉरीशस) यात्रा पृ. 9-10)

स्वामी मंगलानंद पुरी जी के लेख से उद्धृत उपर्युक्त वाक्यों में तत्कालीन हिंदी की स्थिति की स्पष्ट झाँकी मिलती है। वे हिंदी भाषा की दयनीय दशा देखकर दु:ख के सागर में डूब गए।

डॉ. चिरंजीव भारद्वाज एवं सुमंगली देवी की हिंदी-सेवा

स्वामी मंगलानंद पुरी जी के प्रस्थान के पश्चात आर्य समाज ने डॉ. चिरंजीव भारद्वाज और सुमंगली देवी जी के सहयोग से हिंदी आंदोलन की अग्नि प्रज्वलित की। यह अग्नि देशव्यापी हो गई। डॉ. चिरंजीव भारद्वाज दिवस काल में मरीज़ों की सेवा करते थे और रात्रि तथा सप्ताहांत में घूम-घूमकर हिंदी में भाषण देते थे। उन दिनों लड़कियों को पढ़ाने का रिवाज़ नहीं था। डॉ. भारद्वाज जी की पत्नी सुमंगली देवी लड़कियों की पढ़ाई के लिए कन्या पाठशालाओं की स्थापना करती थीं। उनको रूढ़िवादियों से लोहा लेना पड़ता था। स्त्री-शिक्षा के विरोधी लोग कन्या पाठशालाओं को जला डालते थे। इस तरह पति-पत्नी दोनों ने आर्य समाज के आरंभिक वर्षों में कठिन परिश्रम करके हिंदी का प्रचार-प्रसार किया। उन्होंने मॉरीशस के गाँव-गाँव और शहर-शहर में बीसियों हिंदी पाठशालाएँ खोल दीं। हिंदी का टिमटिमाता हुआ जीवन-दीप उनके तप-त्याग से नवजीवन प्राप्त करके जगमगा उठा।

20वीं शती के पूर्वार्ध में आर्य समाजी विद्वानों का आगमन

आर्य समाज के आरंभिक दशकों में भारत से अनेक आर्य समाजी विद्वान मॉरीशस आए और लंबे समय तक यहाँ रहकर वैदिक धर्म के साथ ही हिंदी का प्रचार-प्रसार करते रहे। श्री देववंशलाल रामनाथ जी आर्य समाजी विद्वानों के संबंध में लिखते हैं, ''भारद्वाज के बाद पंडित आत्माराम का आना विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनकी मातृ भाषा मराठी थी लेकिन उन्होंने हिंदी का प्रचार किया और साथ-साथ हिंदुओं में नई जान फूँक दी। मृत्युपर्यंत वे इसी टापू में रहे और मॉरीशस माता की सेवा करते रहे।''

समय-समय पर भारतीय विद्वान मॉरीशस में आने लगे जैसे कि स्वामी स्वतंत्रानंद, स्वामी विज्ञानानंद, पंडित मेहता जैमिनी, स्वामी नारायणानंद, पंडित ऋषिराम, स्वामी आनंद भिक्षु, स्वामी ध्रुवानंद,

आनंद स्वामी आदि। सभी लोगों ने मॉरीशस के हिंदुओं को आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया।

यह मार्के की बात है जब सन् 1925 में पंडित जैमिनी आए तो उन्होंने साफ़ बताया था कि हिंदी ही हिंदुओं की आत्मा है। यदि मॉरीशस में तुलसी कृत 'रामचरितमानस' न आती तो हिंदू लोग अपनी मातृभाषा से वंचित रह जाते। (स्मारिका द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन 1976, पृष्ठ 13)

भारतीय विद्वानों से प्रभावित होकर कई मॉरीशसीय युवक उच्च शिक्षा के लिए भारत गए और डी.ए.वी. कॉलेजों में अध्ययन करके हिंदी के योग्य विद्वान बनकर स्वदेश लौटे। उन विद्वानों में पंडित काशीनाथ किष्टो, पंडित वेणीमाधव सतीराम, पं. लक्ष्मणदत्त शास्त्री, पंडित वासुदेव विष्णुदयाल, पंडित कृष्ण विशारद, पंडित सुखदेव रामप्यार आदि के नाम गर्व से स्मरण किए जाते हैं। इन्होंने हिंदी के प्रचार-प्रसार में अथक प्रयास किया।

सन् 1916 में पंडित काशीनाथ किष्टो डी.ए.वी. कॉलेज, लाहौर से पढ़कर स्वदेश लौटे। यहाँ आते ही धर्म-प्रचार एवं हिंदी-सेवा में जुट गए। सन् 1818 में 'आर्यन वैदिक स्कूल' की स्थापना की। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ इस स्कूल में पढ़ाना आरंभ किया। बच्चों को पढ़ाने के लिए 'शिशु बोध' नामक 3 पुस्तकें लिखीं। उनके शिष्यों में कई लोग कर्मठ समाज-सेवक और हिंदी-प्रचारक बने।

पंडित आत्माराम एवं स्वामी स्वतंत्रानंद

सन् 1912 में पंडित आत्माराम विश्वनाथ मॉरीशस आए। आप हिंदी के अच्छे लेखक और संपादक थे। आप आर्य समाज के मंच से 20 वर्षों तक हिंदी के प्रचार-प्रसार में रत रहे। फिर 1914 में तेजस्वी एवं तपस्वी संन्यासी स्वामी स्वतंत्रानंद जी महाराज का मॉरीशस में पदार्पण हुआ। वे मॉरीशस के कोने-कोने में पैदल पहुँच कर हिंदी पढ़ने-पढ़ाने का संदेश देते रहे। वैदिक धर्म एवं आर्य समाज के मंतव्यों पर हिंदी में धुआँधार प्रवचन करते रहे। उन्होंने अनेक गाँवों में हिंदी पाठशालाएँ खोलीं। 2 वर्ष यहाँ रहकर सैकड़ों व्यक्तियों को हिंदी की ओर उन्मुख किया।

15 मार्च, सन् 1909 में मणिलाल डॉक्टर ने 'हिंदुस्तानी' पत्र निकाला था। इस पत्र के बंद हो जाने पर आर्य समाज ही वह प्रथम स्वैच्छिक संस्था है जिसने 1 जून, 1911 में 'मॉरीशस आर्य पत्रिका' नाम से एक हिंदी पत्र निकाला जिसका संपादन बारी-बारी से पंडित आत्माराम और स्वामी स्वतंत्रानंद जी महाराज ने किया।

इस तरह इन दोनों विद्वानों ने अपूर्व तप-त्याग करके इस देश में हिंदी के वातावरण का निर्माण किया।

पंडित काशीनाथ किष्टो द्वारा हिंदी-आंदोलन

सन् 1916 में पंडित काशीनाथ किष्टो डी.ए.वी. कॉलेज, लाहौर से पढ़कर स्वदेश लौटे। यहाँ आते ही धर्म-प्रचार एवं हिंदी-सेवा में जुट गए। सन् 1918 में 'आर्यन वैदिक स्कूल' की स्थापना की। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ इस स्कूल में पढ़ाना आरंभ किया। बच्चों को पढ़ाने के लिए 'शिशु बोध' नामक 3 पुस्तकें लिखीं। उनके शिष्यों में कई लोग कर्मठ समाज-सेवक और हिंदी-प्रचारक बने।

पंडित काशीनाथ जी ने लेखन, संपादन, गायन और जोशीले प्रवचनों के माध्यम से हिंदी का खूब प्रचार किया। वे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने हिंदी पढ़ाने के लिए बहुतों को प्रशिक्षण दिया। 'आर्य पत्रिका' और 'आर्यवीर' के संपादक होने के नाते उन्होंने सैकड़ों लेख लिखे और मॉरीशसवासियों को हिंदी सीखने की प्रेरणा दी।

पंडित वेणिमाधव सतीराम की हिंदी-सेवा

युवक वेणिमाधव भारत से पढ़कर 1925 में लौटे। वे हिंदी-संस्कृत के अच्छे विद्वान थे व बड़े कुशल वक्ता थे। उन्होंने हिंदी-शिक्षण कार्य में स्तुत्य प्रयास किया। बहुत से आर्य समाजी पंडितों को हिंदी-संस्कृत का अच्छा ज्ञान दिया। उन्होंने दीर्घकाल तक आर्य समाज के पत्रों — 'मॉरीशस आर्य पत्रिका', 'जागृति', 'जागृति-आर्यवीर' और 'आर्योदय' का संपादन किया। वे वर्षों तक पुरोहित-प्रशिक्षण कार्य करते रहे और प्रति सप्ताह 'वैदिक वाणी' कार्यक्रम में ज्ञानवर्धक संदेश रेडियो पर प्रसारित करते रहे। हिंदी के प्रचार-प्रसार में उनका योगदान भुलाया नहीं जा सकता।

श्री मोहनलाल मोहित का हिंदी-शिक्षण में योगदान

मोहनलाल मोहित जी आर्य समाज के भीष्म पितामह थे। उन्होंने दीर्घकाल तक आर्य समाज का हिंदी के माध्यम से नेतृत्व किया। उन्होंने बचपन में कैथी लिपि द्वारा पढ़ाई शुरू की थी। पंडित

काशीनाथ के संपर्क में आकर देवनागरी के माध्यम से हिंदी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया।

वे किशोरावस्था से ही अपने निवास स्थान के आसपास के गाँवों में रहनेवाले युवकों को हिंदी पढ़ाने लगे। सन् 1926 में जब 'आर्य प्रतिनिधि सभा' की पुनर्स्थापना हुई तब वे इस सभा के स्तंभों में से एक थे। बाद में 'आर्य सभा' की स्थापना होने पर इस संस्था के अंतर्गत काम करने लगे। उन्होंने 'आर्योदय' पत्र का लंबे समय तक संपादन किया। वे न केवल शिक्षण द्वारा वरन लेखन द्वारा भी सबको हिंदी सीखने की प्रेरणा देते रहे।

जैमिनी मेहता और स्वामी विज्ञानानंद

सन् 1925 में जैमिनी मेहता जी और 1926 में स्वामी विज्ञानानंद जी मॉरीशस आए। जैमिनी मेहता जी बड़े कुशल वक्ता थे। उन्होंने यहाँ 'आर्य कुमार सभा' की स्थापना की तथा युवकों को हिंदी पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्हीं की प्रेरणा से 1933 में पं. वासुदेव विष्णुदयाल लाहौर के डी.ए.वी. कॉलेज में पढ़ने गए और 6 वर्षों बाद हिंदी और अंग्रेज़ी के योग्य विद्वान बनकर मॉरीशस लौटे। जैमिनी मेहता जी और स्वामी विज्ञानानंद जी ने अपने व्याख्यानों द्वारा मॉरीशस की नई पीढ़ी को हिंदी की ओर आकृष्ट किया।

भारतीय एवं स्थानीय विद्वानों के भगीरथ प्रयत्न से 1935 तक आते-आते आर्य समाज की 75 शाखाएँ खुल चुकी थीं। सभी शाखाओं में हिंदी की पढ़ाई हो रही थी। हिंदी पाठशालाओं के संचालन के लिए वार्षिकोत्सवों का आयोजन होने लगा। उन अवसरों पर आर्थिक दान के लिए अपील की जाती थी। लोग यथाशक्ति दान देते थे। इस प्रकार के आयोजनों से भोजपुरी बोली के मुकाबले हिंदी का प्रचार बढ़ा और वह अधिकाधिक लोकप्रिय होती गई।

यहाँ यह स्मरण दिलाना आवश्यक है कि 12 जून, 1926 को मोंताई लोंग ग्राम में तिलक विद्यालय की स्थापना हुई थी जिसका प्रमुख उद्देश्य था— हिंदी का शिक्षण। इसी विद्यालय से 24 दिसंबर, 1937 को हिंदी प्रचारिणी सभा ने जन्म लिया। श्री यंतुदेव बुधुजी लिखते हैं, ''सभा का आदर्श वाक्य है— 'भाषा गई तो संस्कृति गई'।'' (अंतरराष्ट्रीय (क्षेत्रीय) हिंदी सम्मेलन 2014 की स्मारिका, पृ.101)

उपर्युक्त कथन में कोई संदेह नहीं। हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदी प्रचारिणी सभा का योगदान अत्यंत ही प्रशंसनीय है परंतु हम यहाँ रेखांकित करना चाहेंगे कि आर्य समाज ने हिंदी प्रचारिणी सभा की स्थापना के साढ़े तीन दशक पहले से ही हिंदी प्रचार का आंदोलन प्रारंभ कर दिया था। पुराने ज़माने में हमारे पूर्वज भोजपुरी को 'मोटिया' कहा करते थे और हिंदी को 'भाषा', यदि कोई हिंदी में वार्तालाप करता था तो सुननेवाले कहते थे कि वह 'भाषा' बोलता है। आर्य समाज के अनुयायी हिंदी पढ़ाई की प्रेरणा सब को दिया करते थे। आर्य समाजियों का नारा था 'हिंदी बोलो, हिंदी पढ़ो, हिंदी लिखो।' आर्यों के हिंदी प्रेम को रेखांकित करते हुए मॉरीशस के प्रसिद्ध विद्वान श्री जयनारायण राय जी लिखते हैं, ''सनातन धर्म का प्रचार करनेवाले पंडित-पुरोहित केवल पूजा-पाठ और व्रत अनुष्ठान के अवसर पर ही उपदेश देते थे। इसके विपरीत आर्य समाजी पंडित चाहे त्योहार हो या शादी, मृत्यु-जागरण हो या कोई सामाजिक उत्सव, सभी का उपयोग उपदेश देने के लिए करने लगे। इससे हिंदी के प्रचार-प्रसार को बड़ा बल मिला। आर्य समाजी कौन है, इसका फ़ौरन पता चल जाता था क्योंकि वे हमेशा हिंदी बोलने का आग्रह करते थे। उनकी देखा-देखी और आग्रह पर दूसरे भी हिंदी बोलते और इस तरह अधिकाधिक लोगों को हिंदी बोलने की आदत होती गई।''

आर्य समाज का नामकरण पहले-पहल 'आर्य प्रतिनिधि सभा' से हुआ था। सन् 1913 में डॉ. चिरंजीव भारद्वाज ने उसका पंजीकरण 'आर्य परोपकारिणी सभा' के रूप में किया था। सन् 1926 में कुछ लोगों ने 'आर्य प्रतिनिधि सभा' की पुनर्स्थापना की। 9 जनवरी, सन् 1934 में 'मॉरीशस आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा' नाम से एक और सभा स्थापित हुई। सन् 1950 में 'आर्य परोपकारिणी सभा' और 'आर्य प्रतिनिधि सभा' का विलय हुआ और नया नामकरण किया गया—'आर्य सभा मॉरीशस'।

कुछ समय बाद 'गहलोत राजपूत महासभा' की स्थापना हुई। सभी ने आर्य समाज की ध्वजा को अपने हाथों में थामकर हिंदी के माध्यम से ही अपना प्रचार कार्य किया। परंतु आर्य सभा मॉरीशस ने इस देश में हिंदी के प्रचार-प्रसार में सभी संस्थाओं से अधिक कार्य किए हैं।

1950 के दशक से भारत के अजमेर की आर्य विद्या परिषद द्वारा संचालित 'विद्या विनोद', 'विद्या रत्न', 'विद्या विशारद' और 'विद्या वाचस्पति' परीक्षाओं में भाग लेने के लिए प्रति वर्ष सैकड़ों बच्चों को आर्य सभा के प्रशिक्षित अध्यापक-अध्यापिकाएँ पढ़ाते

रहे। यह शिक्षण-कार्य कई दशकों तक होता रहा। हज़ारों बच्चों ने उक्त प्रमाण पत्र प्राप्त किए। धार्मिक परीक्षाओं के अतिरिक्त हिंदी प्रचारिणी सभा द्वारा संचालित 'हिंदी साहित्य सम्मेलन', प्रयाग की 'परिचय', 'प्रथमा', 'मध्यमा' और 'उत्तमा' तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की 'स्कूल सर्टिफ़िकेट' और 'हायर स्कूल सर्टिफ़िकेट' की परीक्षाओं की तैयारी के लिए भी आर्य समाज के प्रशिक्षित शिक्षक-शिक्षिकाओं ने वर्षों तक बड़ी तन्मयतापूर्वक शिक्षण-कार्य किया है। हज़ारों छात्र उपर्युक्त परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुए हैं।

वर्तमान में इस सभा द्वारा संचालित 200 सायंकालीन और रविवारीय हिंदी पाठशालाओं में प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर हिंदी का शिक्षण-परीक्षण कार्य नियमित रूप से हो रहा है।

भारतीय एवं स्थानीय विद्वानों के भगीरथ प्रयत्न से 1935 तक आते-आते आर्य समाज की 75 शाखाएँ खुल चुकी थीं। सभी शाखाओं में हिंदी की पढ़ाई हो रही थी। हिंदी पाठशालाओं के संचालन के लिए वार्षिकोत्सवों का आयोजन होने लगा। उन अवसरों पर आर्थिक दान के लिए अपील की जाती थी। लोग यथाशक्ति दान देते थे। इस प्रकार के आयोजनों से भोजपुरी बोली के मुकाबले हिंदी का प्रचार बढ़ा और वह अधिकाधिक लोकप्रिय होती गई।

हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए आर्य सभा की 'विद्या समिति' द्वारा नियुक्त निरीक्षक अध्यापक-अध्यापिकाओं को प्रशिक्षित करने के लिए कार्यशालाएँ चलती रही हैं।

प्राथमिक कक्षाओं में पढ़नेवाले छात्र-छात्राओं की पाठ्य-पुस्तकें तैयार की गईं। 6ठी पास विद्यार्थियों के लिए 'सिद्धांत प्रवेश' परीक्षा का सूत्रपात किया गया। इस कक्षा में भाषा पढ़ाने के लिए 'साहित्य प्रवेश' और धार्मिक शिक्षा देने के लिए 'हमारे महापुरुष' नाम से पुस्तकें तैयार की गईं। आर्य सभा ने अपने डी.ए.वी. कॉलेजों में हिंदी की माध्यमिक पढ़ाई, सभा द्वारा स्थापित 'आर्य गुरुकुल' में 'सिद्धांत भास्कर', 'सिद्धांत शास्त्री', 'सिद्धांत वाचस्पति' और ऋषि दयानंद संस्थान में बी.ए., एम.ए., 'धर्म भूषण', 'धर्म रत्न', 'शास्त्री' आदि परीक्षाओं के लिए हिंदी भाषा और हिंदी के माध्यम से धार्मिक शिक्षण का प्रबंध किया है। आर्य सभा के पंडित-पंडिताओं ने हिंदी के ही माध्यम से सत्संग, भाषण, प्रवचन एवं स्थानीय रेडियो-टेलीविज़न पर न केवल 'वैदिक वाणी' कार्यक्रम के माध्यम से अपितु अनेक उत्सवों के अवसर पर वक्तव्यों के द्वारा घर-घर हिंदी पहुँचाई है। पंडितों के प्रवचनों के अतिरिक्त आर्य समाज के भजनीक और गायक भी अपने मधुर भजनों और गीतों के द्वारा श्रोताओं को हिंदी की ओर आकृष्ट करते रहे हैं।

प्राचीन काल में महादेव चुनून, दासी भगत, महादेव मोरिया आदि गायकों के नाम सब के होंठों पर थे। विवाह के अवसरों पर गम्मट का आयोजन होता था। गीतों में गायकों के प्रश्नोत्तर हुआ करते थे जिनका रस लेने के लिए श्रोतागण रात्रि में देर तक जागते रहते थे। इस तरह संगीत द्वारा भी हिंदी का खूब प्रचार किया गया।

गत 40 वर्षों में आर्य सभा ने 'आर्योदय' पत्र के इतने विशेषांक प्रकाशित किए हैं कि यदि सब संगृहीत किए जाएँ तो अनेक ग्रंथ बन जाएँगे। अनेक आर्य समाजी विद्वानों ने अपनी रचनाओं द्वारा हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है।

इस तरह पिछले 100 वर्षों में आर्य समाजी विद्वानों ने हिंदी के प्रचार-प्रसार में बड़े ही प्रशंसनीय कार्य किए हैं।

वर्तमान परिस्थिति

वर्तमान में आर्य सभा के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं। नई पीढ़ी के माता-पिता हिंदी बोलते नहीं। इसका दुष्प्रभाव उनके बच्चों पर अचूक रूप से पड़ा है। माँ-बाप बच्चों को हिंदी पाठशालाओं में न भेजकर उन्हें शाम को अन्य विषयों की ट्यूशन लेने के लिए भेजते हैं। ट्यूशन के बोझ तले बच्चे दबे हुए हैं। बहुत से बच्चे अपनी पाठशाला पहुँचने के लिए 7 बजे सुबह घर से निकलते हैं। अपने-अपने विद्यालय में पढ़ाई समाप्त करके सीधे ट्यूशन लेने जाते हैं और शाम को 6 बजे थके-माँदे घर लौटते हैं। रात्रि के भोजन के बाद होमवर्क करने में जुट जाते हैं। हिंदी पढ़ने के लिए उनके पास फ़ुरसत ही कहाँ? माता-पिता समझते हैं कि हिंदी ज्ञान अनावश्यक है।

माता-पिता की इस प्रवृत्ति को बदलने के लिए सभा की ओर से अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। समझाया जा रहा है कि अपने देश के इतिहास से शिक्षा लेनी चाहिए। हमारे पूर्वजों ने हिंदी की रक्षा करके

ही अपनी रक्षा की। उन्हें आजीविका के लिए घोर परिश्रम करना पड़ता था। उन्हें विधर्मी बनाने के लिए नौकरी का प्रलोभन दिया जाता था। परंतु अपने धर्म, भाषा और संस्कृति-प्रेम के कारण ही वे अपनी पहचान बनाए रखने में अडिग रहे। माता-पिता को बताया जा रहा है कि भाषा संस्कृति की वाहिका होती है। भाषा-संस्कृति के कारण ही एक जाति अपने अस्तित्व की रक्षा कर सकती है।

आर्य सभा भारत के साधु-संन्यासियों को आमंत्रित करती रहती है। सभी एक स्वर में अपने धर्म और भाषा की रक्षा करने की प्रेरणा देते हैं। माता-पिता टेलीविज़न पर हिंदी धारावाहिक देखते रहते हैं पर हिंदी की ओर आकृष्ट होते ही नहीं। हमारे समय के माता-पिता भोजपुरी-भाषी थे। पहले के सभी बच्चे घर में भोजपुरी बोला करते थे। भोजपुरी जानने के कारण उनमें हिंदी सीखने की लगन थी। वर्तमान में अधिकांश बच्चों की मातृ भाषा क्रिओल है। इसलिए आज के बहुत से माँ-बाप हिंदी से कोई सरोकार नहीं रखते। यह एक कड़वी सच्चाई है। धार्मिक पर्वों के अवसर पर हिंदू समुदाय अपने पूजा-पाठ के लिए मंदिरों में जुट तो जाता है परंतु अपनी भाषा सीखने के लिए समय नहीं निकल पाता। माता-पिता की मनोवृत्ति यही है कि उनके बच्चे पढ़-लिखकर उन विषयों में प्रमाण पत्र प्राप्त करें जिनसे उन्हें शीघ्र नौकरी मिल सके। उनकी यह सोच उचित और स्वाभाविक है। हर माँ-बाप की यही साध होती है कि उनकी संतान बेकार न रहे। परंतु वे यह नहीं समझना चाहते कि भाषा-संस्कृति से कटकर वे अपनी पहचान खो देंगे। आर्य सभा 2 प्राथमिक और 2 माध्यमिक विद्यालय चला रही है। चारों विद्यालयों में लगभग 5000 बच्चे पढ़ते हैं जिनमें 50 प्रतिशत हिंदू बच्चे हैं। बहुत से माता-पिता अक्सर पत्र भेजा करते हैं कि उनके बच्चों को हिंदी न पढ़ाई जाए। इस प्रकार वे हिंदी की उपेक्षा करते हैं।

हिंदी पढ़ानेवाले वर्तमान अध्यापकों में वह समर्पण दिखाई नहीं देता जो पूर्व के कमपढ़ गुरुओं में था। आज के अध्यापकों के पास हिंदी के उच्च प्रमाण पत्र हैं परंतु उनमें बहुत कम लोग ऐसे हैं जो अभिभावकों और बच्चों को हिंदी की ओर प्रेरित करते हैं। जब से सरकार ने हिंदी-शिक्षण के लिए भत्ता देना आरंभ किया है तब से बहुत से हिंदी शिक्षक-शिक्षिकाएँ उच्छृंखल हो गए हैं। उन्हें हिंदी-शिक्षण से कोई मतलब नहीं बस सरकारी भत्ते के लिए ही स्कूलों में अपनी उपस्थिति देते हैं। परंतु आज भी कुछेक ऐसे शिक्षक हैं जिनमें हिंदी पढ़ाने की वही लगन है जो आज से 2-4 दशक पूर्व के अध्यापकों में थी। ये अध्यापक अपनी भाषा-संस्कृति के पुजारी हैं।

आर्य समाज ने अपने स्थापना-काल से अब तक हिंदी आंदोलन को जारी रखा है। आज इस आंदोलन को गति देने के लिए सैकड़ों हिंदी सेवकों की आवश्यकता है।

मॉरीशस
davpailles@gmail.com